जीयत रहा

प्रमोद कुमार सिंह

क्यों आती हैं ये ऑधियॉ!पल भर मे हमारा वर्षो का बटोरा, सहेजा उजाड़ कर चली जाती हैं।
पता नहीं बावू साहव फिर से अपनी हिम्मत जुटा पाए या नहीं!
उनसे मिलना मेरे लिए शायद इस जीवन मे सम्भव नही है, पर ऑधियों को मै आज के दिन तक कोसता रहता हूँ। मुझे इस जीवन की भागा दौड़ियों से बड़ी घबराहट होती है। मै हर बसे बसाये घर को देखकर सिहर जाता हूँ। मै खुश हूँ कि मैने अपने जीवन मे कुछ नही बटोरा, न कुछ सहेजा। आने दो इन ऑधियों को। मै देखूँगा, कि वो मेरा क्या उजाड़ कर ले जाती हैं!एक बार मै भी उनकी हठधर्मी पर हॅसना चाहता हूँ।
ऐसी ही एक पागल ऑधी बावू साहव के जीवन मे आई और उनका सब कुछ तवाह कर गई। उनकी नौकरी न रही। उनकी पत्नी न रहीं। उनके ऑखो का तारा उनका एकमात्र सलोना सा बेटा, जो उन्हे अपनी ढलती उम्र मे मिला था, गॉव के नहर मे डूब कर मर गया। पैंतालीस वर्ष का ये जिन्दादिल सिपाही देखते ही देखते बूढा हो गया और झुर्रियों मे नहा गया।
बावू साहव से मेरा परिचय बनारस मे हुआ था, जहॉ के उदय प्रताप कॉलेज से मै बी एस सी कर रहा था। इनसे मेरा परिचय मेरे दो चचेरे भाईयों के जरिये हुआ, जो इसी कॉलेज से एग्रिकल्चर कर रहे थे। बावू साहव का असली नाम क्या था, ये मै आज तक नही जान पाया। उन्हे इसी नाम से मेरे भाई बुलाते थे। मै भी उन्हे इसी नाम से बुलाने लगा। वो जाति के क्षत्रिय थे और दिलदार नगर के रहने वाले थे, जहॉ बनारस से चलने वाली कई बसें हमारे गॉव से गुजरकर जाती थीं। उनकी पत्नी अपने बेटे के साथ गॉव मे ही रहती थी। थोड़ी बहुत पुश्तैनी जमीन थी, जो अधिया पर दी जाती थी। बावू साहव बावतपुर के इन्डियन एयर लाईन्स एयरपोर्ट के सिक्योरिटी सर्विस मे एक मामूली से कान्सटेवल थे। भोजूबीर व ऊँचवा लॉज के बीच सड़क के दूसरी ओर बसे एक छोटे से गॉव मे उन्होने एक झोपड़ी किराये पर ले रखी थी, जिसका किराया उन दिनो दस रूपया था। मिट्टी की दीवारों से बनी इस खपरैल की झोपड़ी मे एक भी खिड़की न थी। बस आम की लकड़ी का एक दरवाजा था, जो बड़ी मुश्किल से बन्द होता था। इसमे तीन ताखे थे, जिनपर अन्ग्रेजी के अखवार बिछे रहते थे। एक ताखे पर बावू साहव की चमचमाती पीतल की वाल्टी, एक लाल प्लास्टिक का मग, नेपाल से मॅगाई सावुनदानी मे विमानो से पार किया सुगन्धित सावुन और नीम की दतुअने पड़ी रहती थीं। दूसरे ताखे पर एक स्टोव, एक व्हिस्की की बोतल मे किरासन तेल और एक इम्पोर्टेड लाईटर सजा रहता था। तीसरे ताखे पर एक ढक्कनदार कनस्तर मे गेहूँ जौ और मकई का मिला जुला आटा, व्हिस्की की ही बोतल मे कच्चे घानी का कड़वा तेल, एक छोटी सी बोआम मे भैंस का शुद्ध घी, रंग विरंगी जेम्स व जेली के शीशियों मे मिर्च मसाले और एक वॉस के दोने मे आस पड़ोस से इकट्ठी की गई सब्जियॉ बड़े करीने से सजी रहती थी। बावू साहव के पास एक वॉस की खाट और मिलिट्री के दो काले कम्वल थे। झोपड़ी मे ही एक वॉस की अरगनी थी, जिसपर उनकी दो जोड़ी वर्दी लटकी रहती थी। इन वर्दियों के अलावे उनके पास दो चारखाने की जंघिया, दो सफेद लुंगी और दो पूरे बॉह की फटी वनियाइने थीं। जव बावू साहव घर पर नही होते थे, तो दूर से ही कुंडी पर लटका उनके गोदरेज का भारी भरकम ताला नजर आता था। उनके पास टीन का एक पुराना बक्सा भी था, जो झोपड़ी के एक कोने मे चार ईंटों पर रखा रहता था। उसे भी वो एक गोदरेज के बड़े से ताले मे बन्द रखते थे। ये दोनो चाभियॉ उनके जनेऊ मे बॅधी रहती थी।
काम पर वो दस बजे जाते थे। नियत समय पर वो अपनी वर्दी पहने शिवपुर की सड़क पर खड़े हो जाते थे, जहॉ से एयर लाईन्स की वस टूरिस्टों, पायलेटों, स्टीवार्डेसों या अन्य कर्मचारियो को लेकर गुजरती थी। काम से वापस भी वो एयर लाईन्स की बस से ही आते थे। सिक्योरिटी के नाम पर विमान के खाली होते ही बावू साहव बड़ी फूर्ति से विमान मे चढ जाते थे। विमान के खाली होने का इन्तजार दूसरे कान्सटेवल भी करते थे। सबके पैंट की जेबों मे एक थैला ठूॅसा रहता था, पर बावू साहव की फूर्ति के सामने ये सब लाचार थे। दूसरो को वही मिल पाता था, जो बावू साहव की उकाब जैसी ऑखे न देख पाती थीं। मिनटों के अन्दर बावू साहव विमान का कोना कोना छान मारते थे, टवायलेट से लेकर कीचन तक। उनके लिये विमान की सारी चीजें मूल्यवान थीं, यहॉ तक कि अन्ग्रेजी के अखवार और पत्रिकायें भी। कागज की प्लेटें, ग्लासें, टीशूज, फ्रेसनर्स, छोटे छोटे ठोंगो मे नमक, मिर्च शक्कर, यात्रियों के भूले सामान लाईटरों, छातों से उनके झोले भरने लगते थे।
परिचय तो उनका सवसे था ही। भाई साहब, बहन जी कहके वो आए दिन नेपाल से आठ दस जोड़े नायलान के मोजे और दो चार स्ट्रेचलान पैंट के पीशेज मॅगवा लेते थे, जिन्हे वो हमारे हॉस्टल मे आकर बेच जाया करते थे। उनकी तनख्वाह बेहद कम थी, पर उनका परिचय पता नही किस किस से और कहॉ कहॉ तक फैला हुआ था!भैया बावू, राजा बच्ची, यही उनके सम्बोधन होते थे। गॉव मे भी उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। सभी उनका बड़ा आदर मान करते थे। अपने सम्वोधनो मे उन्होने जात पॉत का कभी भेद भाव न रखा। इस गॉव मे लोगवाग और तीन वजहों से भी उनका सम्मान करते थे, उनकी वर्दी, उनके पीतल की वाल्टी और उनके जनेऊ मे बॅधी दो बड़ी चाभियॉ। काम पर जाने से पहले सुवह के दो तीन घन्टे वो गॉव के कुॅए पर गुजारते थे, जो उनकी झोपड़ी के ठीक सामने था। इस कुॅए पर पूरा गॉव ही पानी भरने आता था। सैकड़ो बार उन्हे सलाम बाऊ साहव सुनना पड़ता था। बावू साहव मुॅह से दतुअन निकालके जीयत रहा, जीयत रहा, दुहराते व बॉटते रहते थे। घन्टो वो इस कुॅए पर अपने नीम की दतुअन चवाते चुभलाते रहते थे, फिर उसकी छोलनी बनाकर खॅखार खॅखार कर अपनी जीभ साफ करते थे। नहा धोकर जब वो अपनी वर्दी मे शिवपुर की सड़क की तरफ वढते थे, तो उनकी चाल किसी मार्शल से कम वजनदार न होती थी।
काम से वापस आने के वाद वो अपनी वर्दी मे ही पूरे गॉव का चक्कर मार आते थे, सबका हाल चाल ले आते थे। उन्हे पता होता था कि किस बेड़े मे कौन सी सब्जी लगी है। सब्जियॉ वो कभीं भी नही खरीदते थे, पूरे गॉव से इकट्ठी कर लाते थे, कहीं से आलू, कहीं से टमाटर, कही से प्याज, कही से गोभी। शाम का खाना वो स्वयम अपने हॉथो से बनाते थे। दोपहर के खाने का इन्तजाम वो विमानो मे यात्रियो के छोड़े या कीचन मे वचे पैकेटो से कर लेते थे। कभी मुर्गी की टॉगे, कभी कवाव टिक्के, कभी चाप्स, कभी पोमेस। इन जूठनो से उनका पेट तो भर जाता था पर उनकी आत्मा संतुष्ट न हो पाती थी। आटा, तेल, घी, मिर्च मसाले वो अपने गॉव से लाते थे। गॉव भी वो वर्दी मे ही जाते थे। वर्दी की वजह से उन्हे बस का किराया नही देना पड़ता था। झोपड़ी के एक कोने मे एक मोटा सा सोटा टिका रहता था, जिससे वो अक्सर चटनी के लिये इधर उधर से दो चार आम तोड़ लाते थे।

मैने उनसे कभी कुछ नही खरीदा. पर मेरे हॉस्टल मे शायद ही ऐसा कोई था. जिसके पास स्ट्रेचलान की दो चार पैंटे व नायलान के आठ दस मोजे न हों। कभी कभी उन्हे मै मेस के स्पेशल खानो पर बुलाता था। बड़े मन से तो वो न आते थे. पर जब भी आते थे अन्ग्रेजी अखबार व पत्रिकाओ का एक बन्डल लाना न भूलते थे। ये उनके किसी काम की न थीं. सिवाय ताखों पर बिछाने के।

बनारस छोड़ने के वाद मेरे सम्पर्क बावू साहव से न रहे। कभी कभी भाईयो से उनके समाचार मिल जाते थे। उनकी पत्नी गॉव से बनारस आ गई थीं। इस छोटी सी झोपड़ी मे दो और जन। फसल की कटाई पर उनकी पत्नी को गॉव लौटना पड़ता था। सारा हिसाव किताव निपटा कर अपने हिस्से का सारा गल्ला लेकर वो बनारस आ जाती थीं अपने पति की नौकरी पर।

बनारस छोड़ने के वाद सिर्फ एक वार मेरा उनसे व उनके परिवार से मिलना सम्भव हो सका। मै धनवाद के एक मित्र के साथ बनारस आया हुआ था। रविवार का दिन था। अचानक मुझे बावू साहव की याद आई। मै अपने मित्र को लेकर उनके गॉव जा पहुँचा। अपनी झोपड़ी के सामने एक नीम के पेड़ के नीचे अपनी खाट पर बैठे बावू साहव दैनिक आज पढ रहे थे. जो पिछले सप्ताह का था। हमे देखते ही उठ खड़े हुए और अपनी धुली धुलाई लुंगी से खाट झाड़ने लगे। बड़ी आत्मीयता से वो पहले मेरे मित्र से मिले फिर मेरी तरफ रूख किये..

हम नही सोचे थे कि इस जीवन मे कभी आप के दरसन होंगे. कहॉ भगवान किशन के पॉव कहॉ सुदामा की झोपड़ी।

बावू साहव रत्ती भर भी न वदले थे। इसी वीच झोपड़ी से एक लड़का. जो शायद पॉच छ वर्षो का रहा होगा. सकुचाता वाहर आया और हमे देखते ही ठिठक कर खड़ा हो गया। वो विल्कुल नंगा था। पूरे वदन पर मात्र एक लाल रंग का करधन वॅधा था. जिसमे तीन चार ताम्वे के सिक्के झूल रहे थे। न सिर्फ वावू साहव. वल्कि ये लड़का भी कड़वा तेल मे नहाया हुआ था। इनके कानो के पीछे से तेल का एकाध वूॅद तक टपक रहा था।

ःनहाने की तय्यारी कर रहे थे. ये वावू साहव थे।

अपनी मीठी आवाज मे वो इस लड़के को झिड़केःवेटा विनय! पास आके पॉव छूओ न. चाचा जी हैं न। फिर उसे जनेऊ की एक चाभी खोलकर पकड़ा दिये. ःसभ्यता विचार त तू गॉव मे ना सीखला. जाके अम्मा से वोला इनार से एक वालटी पानी ले आवें अउर दू ठे कडवरी तस्तरी मे भेंजे।

दो मिनट के वाद ही विनय वापस आ गयाः. ट्रंकवा मे त पता न का का ह पर चक्कलेट त एक्को ना ह।

वावू साहव विना झिझके वोलेः. अछॉ! त एक साफ कटोरी मे चीन्नीये ले आवा। विनय फिर खाली हॉथ वापस आ गयाः चीन्नी त ना ह।

वावू साहव चौंके. फिर हमारी तरफ विना किसी झेप के देखते हुए वोलेःदिन भर ये लड़का चीन्नी फॉकता रहता है। कही भी छुपावो. तेज एतना है कि खोज ही लेता है। फिर विनय को प्यार से झिड़कते हुए वोलेःका वेटा विनय! तोहरे वावूजी के पास चीन्नी क फैक्ट्री ह का!अभीं परसवे त आधा किलो ले आईल रहलीं। काल सवेरे अपने फादर के गुड़ क चाय पीया के डिउटी पर भेजवा का!वावू साहव की आवाज उतनी ही मीठी थीःकौनो वात ना ह. एक ढेला गुड़वे दे जा।

विनय फिर खाली हॉथ मुॅह लटकाए वापस आयाःगुड़ो ना ह।

अव वावू साहव अन्दर से तो तमतमाये पर ऊपर से वैसे ही विनम्र वने रहेःत जाके मतारी से कहा कि छूछछे पनिये भेजें। वलटिया के दू चार वार डूवकी लगावै के कह दिहा।

कुंए से पानी लाने वावू साहव की पत्नी घूॅघट मे वाहर निकलीं। पास आकर पल्ले से दोनो हॉथ निकाल कर जोड़ गई। उनकी उम्र हमे कुछ ज्यादे न लगी। वो थीं भी वेहद दुवली पतली। वावू साहव भी मस्ती मे आएः. अरे हटावा इ घूॅघट। इ भौजी लोग कव से देवरन से परदा करे लगलीं. कहके खिखियाने लग पड़े।

पानी पीने के वाद हम घन्टों वावू साहव से वावतपुर की कहानियॉ सुनते रहे। इस तरह कव तीन वज गए. हमे पता तक न चला। वावू साहव शाम के खाने की जिद़ पकड़कर बैठ गए। उन्हे टालना वड़ा मुश्किल था। मै सिर्फ एक वार उनके हॉथो का वनाया मीट खाया था. वो भी होली के दिन। जव मैने इसकी वात छेड़ी तो उनका चेहरा पीला पड़ गया। मीट का सामर्थ्य उनमे न था. पर मीट मै खरीदकर लाऊॅ. ये भी वो नही चाहते थे। वड़ी मिन्नत करने के वाद वो राजी हो पाए। मै अपने मित्र के साथ मीट खरीदने शिवपुर चला गया। मेरा दोस्त एक किलो चीनी और एक किलो वर्फी भी खरीदा। जव वो चीनी खरीद रहा था. तभी अचानक एक साथ ही हम एक दूसरे की ओर देखकर हॅस पड़े। लौटते समय रास्ते मे वावू साहव की कोई वात याद करके कभी मै हॅस पड़ता था तो कभी मेरा दोस्त।

घूम फिर कर हम फिर वावू साहव के यहॉ करीव छ वजे पहुॅचे। वो और विनय नहा धो चुके थे। नीम पेंड़ के नीचे. जो वावू साहव का एक तरह से ऑगन था. साफ सफाई करके वो वहॉ न जाने कितने वालटी पानी का छिड़काव कर चुके थे। एक छोटी सी चौकी पर स्टोव. एक पीतल का हॅड़िया. एक परात मे कटा प्याज. टमाटर. हरी धनिया. हरी मिर्च और एक कठौत मे गूॅथा ऑटा एक भींगे साफ गमछी से ढॅका पड़ा था। वॅसहटी पर भी एक कम्वल विछा था. जिस पर चादर की जॅगह वावू साहव की लुंगी विछी थी। एक पीढे पर पीतल वाली वाल्टी पानी से लवालव भरी पड़ी थी। हल्का हल्का ॲधेरा विखर चुका था। थोड़ी थोड़ी हवा भी वह रही थी। दिन का ताप कम हो चला था। नीम के एक नीची डाल से वॅधी रस्सी से एक लालटेन झूल रहा था। वावू साहव की पत्नी सील लोढे पर मसाला पीस रहीं थीं। हमे आते देखकर उन्होने फिर घूॅघट कर लिया। विनय वाल्टी से मग मे पानी लेकर हमारे हॉथ मुॅह धुलवाया. वगल मे वावू साहव हॉथ मे ॲगोछी लिए खड़े थे। गॉव धूप्प ॲधेरे मे खो चला था। चारों ओर वस निरवता ही निरवता थी .जो यदा कदा एक दो कुत्तों के भोंकने से ही टूटती थीं। हम वॅसहटी पर बैठे वावू साहव से गप्पें मारते रहे. खाना पकता रहा। लालटेन हवा के मद्धिम झोको से रह रह कर डोल उठता था. फिर मिनटो डोलता रहता था। कभीं कभीं तो गॉव के अवारे कुत्ते स्टोव के पास तक आ जाते थे. जिन्हे विनय आम तोड़ने वाली सोटी से दुरदुराकर दूर तक खदेड़ आता था। इन कुत्तो के पास धैर्य था ही नही। खदेड़े जाने के वावजूद भी एकाध कुत्ते तो आसपास के खपरैलो पर जा चढे थे और वहीं से गुर्रा रहे थे।

मीट वन चुका था। वावू साहव की पत्नी अव मोटी मोटी रोटियॉ सेंक रही थीं। हम वावू साहव के साथ जमीन पर विछे कंवल पर आ बैठे। मीट परोस कर वावू साहव की पत्नी पहली रोटी. जो शुद्ध घी मे नहाई हुई थी मेरी ही थाली मे डालीं. जो मैने अपने दोस्त की थाली मे डाल दी। विनय सोटा लिये उसे गदे की तरह हवा मे हिलाता रहा। रह रह कर वो हम तीन जनो के सामने खड़ा हो जाता था। हम उसके मुॅह मे एक कौर डाल देते थे. फिर वो

अपनी सोटी हवा मे लहराने लगता था। एक भी कुत्ते को उसने पास फटकने न दिया। हम निर्विघ्न खाना खाते रहे।

ये था बाबू साहब व उनके परिवार का सौहादर्य। तमाम अभावों के बीच पनपा उनका सौन्दर्य भाव. जो जीवन मे मात्र पैसों से नही आता। एक एक पाई जोड़ कर बाबू साहब अपना परिवार चला रहे थे और एक सम्मानित जीवन अपने सामर्थ्य के अनुसार जी रहे थे।

मुझे अच्छी तरह याद है. हमारे हॉस्टल मे एक विहार का लड़का रहता था. रामऔतार सिंह. जिसे पढाई लिखाई मे कम दन्ड बैठक मे ज्यादे रूचि थी। वो बनारस एग्रिकल्चर पढने आया था। मेस के दो वक्त का खाना डटकर खाना और दिन भर दन्ड बैठकी लगाना। एक तीसरा काम भी उसके पास था. जब तब अपनी मूछे ऐंठना। वो भी बाबू साहब का पक्का गाहक था। बाबू साहब सबसे पहले रामऔतार के कमरे मे ही अपनी दुकान खोलते थे। वो था तो जात का भूमिहार. पर बाबू साहब उसे राना प्रताप कहके बुलाते थे। बाबू साहब की नजरों मे वो सारे क्षत्रिय विद्दार्थियों का आदर्श था। उसकी कसरती देंह. उसकी काली ऐंठी मूछें देखकर बाबू साहब फूले न समाते थे. गोकि वो स्वभाव से एक नम्बर का डरपोक था।

एक बार उसे हल्का सा बुखार आ गया था. पर उसका खाना पीना पूर्ववत ही था। बाबू साहब को समाचार मिला. वो भागे दौड़े आए। रामऔतार अपनी चौकी फ्लोर की खिड़की से लगाके रखता था। खिड़की खुली थी और रामऔतार दोपहर का खाना जीम कर सिर तक लुंगी ओढे सो रहा था। बाबू साहब अपनी मीठी आवाज मे राना प्रताप को जगाने मे लगे थे. . प्र ता प बेटा प्र ता प. पर प्रताप के कानो मे जूँ तक न रेंग रही थी। बाबू साहब घबराये भागे मेरे कमरे मे आए और रामऔतार के जी जवार के बारे मे पूछने लगे। जाते जाते वो ये भी हिदायत दे. गए. . बाबू उसका ख्याल रखिएगा। बच्चा परदेस मे है।

किस ऑख का छल किस ऑख की निश्छलता किससे छुपी है या छुपी रह सकती है! हॉस्टल मे बाबू साहब से जो भी मिलता था. दॉत चियारकर उससे बस एक ही प्रश्न पूछते थेः. का बच्ची कुल ठीक ठाक ह न!तबियत मस्त ह न!नमस्ते बन्दगी का उनके पास मात्र एक जवाब होता था. जीयत रहा . जीयत रहा।

विनय के प्रति उनका अगाध प्रेम उनके इर्द गिर्द न सिर्फ प्रतिबिंबित. वरन प्रतिध्वनित भी होता था।

मै उन दिनो बनारस से धनबाद वापस आ चुका था। अपने भाई के एक पत्र से मुझे पता चला कि बाबू साहब पर उल्टे सीधे इल्जाम लगा कर उन्हे उनकी नौकरी से निकाल दिया गया है। उल्टे सीधे क्या!अपनी नौकरी मे वो उल्टे सीधे ही तो कर रहे थे। अब वो बनारस मे क्या करते!सपरिवार दिलदारनगर वापस लौट गये।

जब मुझे ये समाचार मिला. तब मुझे दुख तो हुआ. पर मुझे एक बात का आसरा था कि बाबू साहब जैसे जीवट इन्सान छोटी मोटी बातों से कॉपते सिहरते नही है। वो सब कुछ फिर से सम्हाल लेंगे।

उन दिनो गॉवों मे चक्कबन्दियॉ चल रही थी। बाबू साहब अपनी उपजाऊ जमीने दे देकर ऊसर जमीने बटोरे जा रहे थे। अपने पॉच बिस्से जमीन देकर अब वो पॉच बिघ्घे जमीन के काश्तकार थे। दो वर्ष लगातार वो अपनी जमीनो मे जानवरों के चारे लगा कर उन्हे अपने खेतों मे सड़ने दिये और स्वयम दूसरे लोगों के खेतों मे मजदूरी करके अपना और अपने परिवार का पेट पालते रहे। तीसरे वर्ष उनकी खेतों मे जौ और गेहूँ की फसलें बोई गई। नहर का पानी उनके लिए मँहगा था। दिन भर वो अकेले एक मरियल बैल की मदद से एक चमड़े की सिली डोल से अपने कुएँ का पानी अपनी खेतों मे उलेचते रहते थे। सुबह ही सुबह विनय भी खेतों मे जा पहुँचता था। बाबू साहब दिन भर अपनी खेतों को सींचते रहते थे और विनय दूसरे बच्चों के संग नंग धड़ंग नहर मे छलान्गे लगाता रहता था। गेहूँ और जौ की बालियों को देख कर बाबू साहब निहाल हो जाते थे। बाबू साहब की पत्नी समय से इन दो जनों के लिए खेतों पर ही सुबह का नाश्ता और दोपहर का खाना एक कँहारिन के हॉथों भिजवा देती थीं। दरअसल ये कँहारिन ही घर के सारे काम देखती थी। बाबू साहब की पत्नी से उतना काम नही हो पाता था। उन्हे टी बी हो गई थी. जिसका इलाज मुगलसराय का कोई नीम हकीम कर रहा था।

ऐसी ही एक मनहूस दोपहर मे एक साथ नहर मे नहाते आठ दस बच्चे भागते बाबू साहब के पास आयेःविनय नहर पर बनी एक पुलिया के नीचे एक नाली मे जा फँसा था। अपने डोल बैल को छोड़ कर बाबू साहब बेतहाशा पुलिया की ओर भागे। विनय के प्राण पंक्षी उसे छोड़ कर न जाने किस बादल के ऑचल मे जा छुपे थे!। विधि और विधाता को बाबू साहब से विनय को वंचित नही करना था। इस क्षति से उबरना बाबू साहब के वश का न था। विनय मे उनके प्राण बसते थे।

विनय की मृत्यु से पहले वो मेरे भाईयों से अक्सर बसों मे या फिर सकलडीहा या फिर चन्दौली के बाजारों मे टकरा जाते थे। इस जरिये मुझे भी उनका हाल चाल मिल जाता था। विनय की मृत्यू के बाद वो बिल्कुल ही लोप हो गये थे।

कई वर्षो के बाद मेरे एक भाई को वो एक पैसेन्जर ट्रेन मे मिले. पर उसे पहचान न पाये। घूटने तक बन्धी मटमैली धोती. पूरी बॉह की फटी बनियान पहने बाबू साहब एक ढपला बजा बजा कर कबीरदास का एक कोई निर्गूण पद गाये जा रहे थेःएक काफिले के संग हमारे जीवन का सफर शुरू होता है। किसी न किसी मोड़ पर हमसे हमारा कोई न कोई बिछूड़ जाता है। उसका बस इतना ही साथ हमारे भाग्य मे लिखा होता है। यह क्रम चलता रहता है फिर हम अपने सफर मे अकेले हो जाते हैं. पर हम अकेले नही होते हैं। हमारा कर्म हमारे साथ साथ चलता होता है।

धनबाद के सरकारी कोठी के पीछे वाले ताड़ के पत्तो से झूलते घोंसलों मे से एक घोंसला फिर मेरे ऑख के ठीक सामने जमीन पर आ गिरा. उसमे न फूटे अंडे थे. न कोई नवजात चिड़ियॉ। इस घोसले मे बाबू साहब के सपनो की एक लाश थी। मुझे कोई खूरपी अपने हॉथों मे न लेनी पड़ी। अपने राशन वाले कमरे के ताखे पर अपने तमाम जमा किये गए घोसलों के बीच मैने ये घोंसला भी जाकर लिटा दिया।

ये कई वर्षो पहले की बात है।

अक्सर मै बाबू साहब को याद करता हूँ। उनसे सिर्फ बार बार यही कहता हूँःबाबू साहब उठ कर के आप अपनी हिम्मत बटोरें. अपनी हिम्मत न हारें। आने दीजिये इन ऑधियों को. उजाड़ने दीजिये उन्हे. जो वो उजाड़ना चाहती हैं। आप उन पर हँसें उनको अपने पर मत हँसने दें।